SHODHPATRA: INTERNATIONAL JOURNAL OF SCIENCE AND HUMANITIES
E-ISSN: 3048-6041 | Volume- 3, Issue- 5 | May 2026

समकालीन हिन्दी उपन्यासों में किन्नर समाज की व्यथा

डॉ. अमनदीप कौर
सहायक प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज, संतपुरा, यमुनानगर

सारांश :

हिन्दी उपन्यासों में किन्नर समाज का चित्रण केवल एक उपेक्षित वर्ग के रूप में नहीं, बल्कि मानवीय संवेदनाओं, सामाजिक संघर्षों और अस्तित्व की पीडा के प्रतीक के रूप में किया गया है। भारतीय समाज में किन्नर समुदाय लंबे समय से सामाजिक तिरस्कार, उपेक्षा और भेदभाव का सामना करता रहा है। समकालीन साहित्यकारों ने अपने उपन्यासों के माध्यम से किन्नरों के जीवन की वास्तविकताओं, उनकी भावनाओं, संघर्षों तथा पहचान के संकट को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। किन्नर पात्रों को अक्सर परिवार से बहिष्कृत, शिक्षा और रोजगाार से वंचित तथा सामाजिक सम्मान के लिए संघर्षरत दिखाया गया है। अनेक उपन्यासों में यह स्पष्ट किया गया है कि समाज उन्हें केवल मनोरंजन या शुभ अवसरों तक सीमित कर देता है, जबकि उनकी मानवीय संवेदनाओं और अधिकारों की अनदेखी की जाती है। हिन्दी उपन्यासों में किन्नर समाज की व्यथा सामाजिक असमानता, लैंगिक भेदभाव और पहचान के संकट को उजागर करती है। साथ ही, ये रचनाएं समाज को संवेदनशीलता, समानता और मानवीय दृष्टिकांण अपनाने का संदेश भी देती हैं। इस प्रकार, हिन्दी उपन्यास किन्नर समुदाय की पीडा को अभिव्यक्ति देने के साथ–साथ सामाजिक चेतना जागृत करने का महत्वपूर्ण कार्य करते हैं।

विशिष्ट शब्द : किन्नर समाज, सामाजिक व्यथा, लैंगिक असमानता, सामाजिक बहिष्कार, मानवीय संवेदना, तृतीय लिंग, सामाजिक न्याय, पहचान का संकट।

प्रस्तावना :

साहित्य और समाज परस्पर एक–दूसरे से संबंधित है। समाज में जो कुछ व्याप्त है, वह सब साहित्यकार की संवेदना, चिंता और चिंतन का विषय होता है। जिसकी अभिव्यक्ति के द्वारा वह समाज में अपनी भूमिका का निर्वाह करता है। साहित्य समाज के बदलते स्वरुप, रुचियों और परिस्थितियों के सम्मुख एक चुनौती के रुप में आता है। वह अपने समय की कलात्मक अभिव्यक्ति करता है, साथ ही समाज में हो रही उथल–पुथल और बदलावों को दिखाते हुए मानवीय संवेदनाओं से वंचित हो रहे समाज की ओर से लड़ाई भी लड़ता है। साहित्यकार परिस्थितियों से प्रभावित होकर ही साहित्य का सृजन करता है। यौनिक अस्पष्टता के कारण तिरस्कृत जीवन जीने को विवश तृतीय लिंगी समाज ने भी साहित्यकारों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित किया है और पाठकों को इन लोगों के समस्यापरक जीवन से रुबरु करवाया। साहित्यकारों ने किन्नर समाज की समस्याओं, असमानता, लैंगिक विकृति के कारण तिरस्कृत एवं उपेक्षित जीवन जीने के यथार्थ को दिखाया है। तृतीय लिंगी समाज अपने अस्तित्व की लड़ाई लड़ते हुए अनेक प्रकार की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक अवरोधों से जूझ रहा है। आज ये अपने हक की लड़ाई लड़ रहे है।

Published: 30 May 2026
DOI: https://doi.org/10.70558/SPIJSH.2026.v3.i5.45761
Copyright © 2026 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

किन्नर या हिजड़ों से अभिप्राय उन लोगों से है, जिनके जननांग पूरी तरह विकसित न हो पाए हों अथवा पुरुष होकर भी स्त्री स्वभाव के बीच रहने में सहजता महसूस होती है। किन्नरों को चार शाखाओं में विभाजित किया गया है – बुचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा। बुचरा शाखा में जन्मजात, नीलिमा शाखा में जबरन बनाए गए, मनसा शाखा में अपनी इच्छा से बने और हंसा शाखा में उन्हें स्थान दिया जाता है जो शारीरिक कमी के कारण किन्नर बनते हैं। डॉ. रमाकांत राय के शब्दों में :– ''हिजड़ा होना प्राकृतिक है। शरीर विज्ञान के दृष्टिकोण से गुणसूत्रीय विशिष्टता को कभी सम्मान की नजर से नहीं देखा गया। इसे हीन दृष्टिकोण से देखे जाने के तमाम सामाजिक–ऐतिहासिक उदाहरण भरे पड़े हैं।''[1]

आज भारतीय समाज और साहित्य में किन्नरों की समस्या एक सामाजिक समस्या का रुप धारण कर चुकी है। किन्नर वर्ग अपनी अस्मिता और अधिकारों के लिए संघर्ष कर रहा है। पहले समाज में थर्ड जेंडर के साथ समान व्यवहार किया जाता था, परन्तु वर्तमान समय में समाज इन्हें हेय मानता है, घृणा की दृष्टि से देखता है। जैसे वह मनुष्य नहीं किसी ओर ग्रह के प्राणी हों। आज भारत में इनकी संख्या सात से आठ लाख के आस पास होगी और यह छोटा सा समुदाय साधारण जीवन जीने के लिए कठिन संघर्ष कर रहा है। ये नाच गाकर, बधाई बजाकर तथा शुभ अवसरों पर नेग लेकर अपना पालन पोषण करते हैं। ये जन्म से ही समाज की उपेक्षा, उपहास, तिरस्कार सहने को अभिशप्त है। सबकी उपेक्षा व उपहास सहने वाला किन्नर समाज भी आम आदमी की तरह जीने का अधिकार रखता है। लेकिन समाज की मानसिकता आज भी उनके प्रति रुढ़िवादी बनी हुई है। वर्तमान में सुप्रीम कोर्ट द्वारा किन्नरों को तीसरे लिंग के रुप में मान्यता दिए जाने के बावजूद इनकी सामाजिक स्वीकार्यता और समाज में भागीदारी को लेकर संकट बना हुआ है। किन्नर समुदाय पूरी ताकत से अपनी अस्मिता के लिए संघर्षरत है। वर्तमान युग में किन्नर समुदाय अपमान और परिहास का विषय बन गया है, समाज ने उन्हें अपनी जरूरतों के हिसाब से चुना है, वह मांगलिक और शुभ अवसरों पर इनको नाच–गवाकर विदा कर देता है। कुछ रुपये–पैसे देकर इन्हें अपनी देहरी से विदा करना समाज अपनी जिम्मेदारी समझता है। शेष दिन केवल उपहास, रोजी–रोटी का संकट, तिरस्कार और उपेक्षा जैसी परिस्थितियों से इन्हें गुजरना पड़ता है। जिसके कारण समाज का यह अंग अभिशापित जीवन व्यतीत करने को विवश हो रहा है। हिन्दी साहित्य के अनेक जागृत और सजग साहित्यकारों ने किन्नर समाज की इस वास्तविकता को अपने उपन्यासों में बयां करके, किन्नर समुदाय की समस्याओं को उजागर करने का प्रयास किया है।

हिन्दी साहित्यकारों ने किन्नर समुदाय से संबंधित अनेक उपन्यास लिखे हैं। इन उपन्यासों में किन्नर समुदाय के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक पक्ष का चित्रण है। उपन्यासकारों ने किन्नर समुदाय की पीडा, अपमान, शोषण आदि को यथार्थवादी धरातल पर प्रस्तुत किया है। किन्नरों को उनकी अस्मिता से परिचित कराया और समाज में उन्हें जीने लायक सम्मान और अधिकार प्राप्त कराने का प्रयास किया है। किन्नर सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से शोषित है।

नीरजा माधव कृत 'यमदीप' उपन्यास किन्नरों की संवेदना, किन्नरों के मन की अतल गहराईयों में हिल्लोरे लेने वाली भावनाओं एवं उनके जीवन यथार्थ की पर्तो को खोलता है। यमदीप उपन्यास की नायिका नाजबीबी उर्फ नंदरानी है, जो महताब गुरु के आधिपत्य में बनारस स्थित किन्नर बस्ती में रहती है। चालीस वर्षीय नाजबीबी किन्नर ही इस उपन्यास की मुख्य पात्र है। उसके साथ चमेली, शबनम और मंजू हैं। वे बीस–पच्चीस किन्नरों की बस्ती में रहते है। वहां गली में एक पागल स्त्री प्रसव वेदना से तड़पती एक बच्ची को जन्म देकर मर जाती है। बच्ची के जन्म के बाद सभी वहां से हटने लगते हैं, तब नाजबीबी उस बच्ची को लेकर कहती है:– "अब कोई पूछनहार नहीं इसका तो क्या हम भी छोड़ जाऐंगे? अरे हम हिजड़े हैं.....इन्सान हैं क्या जो मूंह फेर लें।"[2] उस बच्चे को लेने के लिए समाज तैयार नहीं हुआ, तब

किन्नर नाजबीबी समाज पर व्यंग्य प्रहार करके उस बच्ची को अपने साथ ले जाता है, उसे सोना नाम देता है और माँ बनकर उसका पालन पोषण करता है। लेखिका ने किन्नरों की ममता और मानवीय संवेदना को उजागर किया है। इस उपन्यास में मानवी और आनन्द कुमार के माध्यम से किन्नरों से संबंधित ऐतिहासिक संदर्भो को रेखांकित करने के साथ–साथ उनकी समस्याओं एवं मानसिक यातनाओं को उजागर किया गया है। साथ ही उनकी सामाजिक उपयोगिता की ओर भी ध्यान आकर्षित किया गया है। लेखिका का मानना है कि किन्नरों की अवहेलना करने की बजाय उन्हें रोजगार उपलब्ध कराया जाए तो वे अपनी पारम्परिक भूमिका से बाहर आ सकेंगे और स्वतंत्र रुप से इज्जत से जीवनयापन कर सकेंगे।

डॉ. अनुसूईया त्यागी के 'मैं भी औरत हूँ' उपन्यास में लेखिका स्वयं स्त्रीरोग एवं प्रसुती विशेषज्ञ है। उन्होनें ऐसी दो बहनों की कहानी लिखी है, जिन्हें स्वयं या उनके परिवार को लबें समय तक उनके तृतीय लिंगी होने का आभास तक नहीं होता। उपन्यास में मास्टर तुलसीराम की दोनों बेटियां लैंगिक विकृतियों के साथ पैदा हुई हैं। यह बात न तो लडकियाँ जानती हैं और न ही माता–पिता। छोटी बेटी रोशनी को तो उस समय पता चलता है, जब गांव के लड़के उसका बलात्कार करना चाहते है और उसे हिजड़ा कहकर भाग जाते हैं। तभी रोशनी को लगता है उसके शरीर में कुछ न कुछ अधूरा है। इधर मंजुला की बढ़ती उम्र से परेशान मां सोचती है, मंजुला सत्रह की होकर अठारहवें में लग गई है, लेकिन उसे मासिक स्त्राव अब तक क्यों नहीं शुरु हुआ? अब वो कोई आलस्य नहीं करेगी, कल ही दोनों लड़कियों को गाजियाबाद दिखाकर लाएगी। अगले दिन पति–पत्नी दोनों बेटियों को डॉ.रमन्ना के नर्सिंग होम लेकर जाते हैं। जब ऑप्रेशन करवाने के लिए जाते हैं, तब सबसे पहले उनके मन में समाज का भयानक चेहरा सामने आता है। तुलसीराम डॉक्टर से कहते हैं:– "डॉक्टर साहब, मैं दोनों बेटियों को लेकर आ गया हूँ, अब आप दोनों बेटियों का ऑप्रेशन कर दीजिए, पर आपसे प्रार्थना है कि आप हमारे बारे में किसी को भी न बताए, हम यह सब गुप्त रखना चाहते हैं। आप तो जानती हैं कि हमारे समाज में यदि यह सब बातें पता चलेंगी तो लड़कियों की शादी होना भी मुश्किल हो जाएगी।"[3] चौधरी साहब के कथन से भारतीय समाज का वास्तविक चित्र हमारे सामने आता है। ऑप्रेशन करके दोनों बेटियों को स्त्री रुप दिया जाता है। लेखिका ने जहां शरीर विज्ञान और चिकित्सा संबंधी विवरण शामिल किए हैं, वहीं तृतीय लिंगी व्यक्ति की मानसिकता का भी खुलासा किया है। उपन्यास में किन्नरों की समस्याओं का गहन चिंतन करके सैद्धान्तिक रुप में घटनाओं का चित्रण किया गया है।

महेन्द्र भीष्म कृत 'किन्नर कथा' उपन्यास किन्नरों को अपने सम्मान और अधिकारों के प्रति जागरुक करता है। 'किन्नर कथा' के माध्यम से किन्नरों की आह और वेदना की उपस्थिति दर्ज की गई है, जो अपने ही परिवार और समाज से निरन्तर दुखों की पीड़ा झेलते रहते हैं। प्रस्तुत उपन्यास में रानी आभा सिंह की कोख से दो जुड़वा बच्चियां जन्म लेती हैं, दोनों में से एक शिशु के जननांग अविकसित थे। जब आभा को इस सत्य का पता चलता है तो उस पर दुखों का पहाड़ टूट पड़ता है। वह जानती है कि राजा का व्यवहार गुस्सैल है, वह कभी भी इस बच्ची को अपनी संतान के रुप में स्वीकार नहीं करेगें। इसी कारण आभा चार वर्ष तक इस सत्य को छुपाये रखती है, लेकिन एक दिन राजा को अकस्मात् ही इस घटना का पता चल जाता है और वह क्रोधित होकर कहते हैं:– "हे भगवान! हमारी संतान हिजड़ा! वीर बुंदेला खानदान में हिजड़ा ने जन्म लिया और उसे कानों–कान खबर नहीं, इतना बड़ा धोखा, इतना बड़ा विश्वासघात।"[4] इसी कारण वह अपनी बेटी सोना को मरवाने की योजना अपने दीवान पंचम सिंह के साथ बनाता है, ताकि समाज में उन्हें अपमानित न होना पड़े। इसी कारण वह अपनी पुत्री को दीवान पंचम सिंह को सौंप देता है, ताकि वह उससे छुटकारा पा सके।

उपन्यास का एक अन्य किन्नर पात्र तारा को भी इसी कारण घर परिवार से दूर होना पड़ता है। तारा के माता–पिता उसे दूर नहीं करना चाहते पर तारा का भाई उसे बिल्कुल बर्दाश्त नहीं कर पाता। तारा के स्त्रैण स्वभाव के कारण सभी उसका मज़ाक उड़ाते। तारा स्कूल में लड़कियों से तो बोल लेता पर लड़कों से नहीं बोल पाता। जब परिवार वालों ने उसकी जाँच करवाई तो पता चला कि वह किन्नर है। इस कारण उसके परिवार वालों का रवैया बदल जाता है। प्रस्तुत उपन्यास में नकली किन्नरों की समस्या को भी उठाया गया है, नकली किन्नरों के कारण ही असली किन्नरों का जीवन संकट में पड़ गया है और अपने अस्तित्व को बनाए रखने की चिंता उन्हें सताने लगी है। 'किन्नर कथा' उपन्यास में भी नकली किन्नरों के कारण असली किन्नरों का वजूद खतरे में पड़ जाता है। उपन्यास की पात्र नगीना क्रोधित होकर कहती है:– "आज साला कोई नामर्द रंडुवे, तीन–तीन बच्चों का बाप बन बैठे हैं और साड़ी पहनकर सारा हक मारने पर तुले हैं, इनको बहुत शौक है हिजड़ा बनने का, जाओ सालो बहुचर माई अगले जन्म में तुम सभी की मुराद पूरी कर दे, तब जानेंगे ये कि हिजड़ा होने का क्या दर्द होता है?"[5] हमारे समाज के अभिन्न अंग किन्नर समुदाय पर लिखा गया यह उपन्यास कहीं न कहीं हमारे समाज को किन्नरों की पीड़ा, दुःख–दर्द, जीवन जीने की विभीषका और भंयकर त्रासद स्थिति से अवगत कराना चाहता है।

प्रदीप सौरभ जी के 'तीसरी ताली' उपन्यास में उभयलिंगी, किन्नरों में समलैंगिकता को प्रधान विषय बनाया गया है। प्रस्तुत उपन्यास में गौतम नामक व्यक्ति के परिवार का वर्णन करते हुए उनके घर से कहानी की शुरुआत हुई है। उनके घर बेटा पैदा होता है, किन्तु जब हिजड़े उनके दरवाजे पर तीसरी ताली बजाते हैं तो गौतम अपने घर का दरवाजा नहीं खोलता। गौतम और उनकी पत्नी घर में बच्चा पैदा होने की खुशी महसूस नहीं कर पाते। क्योंकि खुशियां भी लिंग पर निर्भर करती हैं। गौतम अपने किन्नर बेटे को समाज की नजरों से हमेशा दूर ही रखता है। लेकिन अंततः सामाजिक अवहेलना के कारण उसे बच्चे को त्यागना पड़ता है। प्रदीप सौरभ कहते हैं कि:– "हम विकलांग और विक्षिप्त व्यक्ति को पूरी जिन्दगी साथ रखते हैं, लेकिन शारीरिक रुप से स्वस्थ इस वर्ग को साथ रखने को तैयार नहीं है।" विनीत उर्फ विनीता, जो अपने आप में एक बहुत ही जीवंत चरित्र है, लेकिन अन्दर से बिल्कुल टूटा, असहाय, खालीपन समेटे था। दूसरे शब्दों में कहें कि मृतप्रायः है। वह कामयाब है – जमाने की दृष्टि में, लेकिन अपने मन की कोठरी में वह नितान्त अकेला है। वह अपने एकाकीपन को किसी के साथ साझा भी नहीं कर सकता। अपनी आधी–अधूरी जिन्दगी के साथ कामयाबी का नकाब ओढ़े जीवन जीने का प्रयास ही उसके चरित्र को जीवंत बनाता है।

उपन्यास का एक ओर पात्र आनन्दी आंटी जो अपनी बेटी निकिता को पढ़ाना–लिखाना चाहती है, ताकि बड़ी होकर वह अपने पैरों पर खड़ी हो सके। उन्हें समाज की कोई परवाह नहीं लेकिन सच्चाई इसके विपरीत है, जिसके चलते उन्हे निराशा का मुँह देखना पड़ता है। फिर चाहे लड़कियों का स्कूल हो या लड़कों का, दोनों जगह एक ही जवाब मिला कि:– "जेंड़र स्पष्ट न होने के कारण हम दाखिला नहीं दे सकते हैं। यह स्कूल सामान्य बच्चों के लिए है, बीच वाले बच्चों को दाखिला देने से स्कूल का माहौल खराब हो जाता है।"[6] यह कैसी विडम्बना है या समाज का नियम है कि एक बालक चाहे कैसा भी है, उसे उसके माता–पिता अपने साथ रखकर पालन–पोषण करना चाहते हैं, वे उसके हर गुण–अवगुण के साथ उसे स्वीकारना चाहते हैं। लेकिन समाज दीवार बनकर खड़ा हो जाता है। यह तो जानवरों से भी बदतर स्थिति है। प्रस्तुत उपन्यास में किन्नरों की वर्जित दुनिया का चित्रण है। 'तीसरी ताली' उपन्यास में समलैंगिकता, गे मूवमेंट, लिंग परिवर्तन, अप्राकृतिक यौनात्मक जीवन शैली और असली–नकली किन्नरों की समस्याओं को व्यक्त किया गया है। इस उपन्यास में कुछ रोचक तथ्य भी सामने आते हैं, जैसे–किन्नर लोगों का शादी करना, करवाचौथ रखना, एक रात के लिए सुहागन बनना और अगले दिन विधवा हो जाना, विधवा होने पर विलाप करना, मंगलसूत्र तोड़ने की प्रथा आदि। 'तीसरी तीली' को हिन्दी का साहसी

उपन्यास कहा जाना चाहिए। किन्नर समाज बहिष्कृत और दंडितों जैसा जीवन जीने के लिए मजबूर है। 'तीसरी ताली' यह किन्नरों के सुख–दुःख की आवाज है। उनके जीवन का दर्पण है।

निर्मला भुराड़िया का 'गुलाम मंड़ी' उपन्यास एक प्रमुख कृति है जो सन् 2014 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास यौन शोषण, स्त्री देह व्यापार, मानव तस्करी और किन्नरों को केन्द्र में रखकर लिखा गया है। प्रस्तुत उपन्यास दो मुख्य कथाओं पर आधारित है। पहली कथा विश्वभर में बच्चों और औरतों की खरीद–फरोख्त की है जिसे मानव तस्करी कहा जाता है। दूसरी कथा है– किन्नर वर्ग की, जिन्हें पग–पग पर अपनी अधूरी पहचान यानी लिंग स्पष्ट न होने के कारण तिरस्कृत होना पड़ता है। जबकि इसमें उनका स्वयं का कोई दोष नहीं होता। प्रस्तावना में लेखिका ने लिखा है:– "आखिर यह बाकी इंसानों की तरह मानवीय गरिमा के हक़दार क्यों नहीं? बस यही प्रश्न हमेशा से दिमाग में था। इसलिए इस नावेल में किन्नरों के पात्र रचे गए हैं और उनके बारे में उनकी तरफ से लिखा गया, समाज की ओर से नहीं। उनका पक्ष जानने समझने के लिए मैं कई किन्नरों से मिली हूँ उनके आवास पर भी गई हूँ। किसी किरदार को रचने के लिए आपको पर काया प्रवेश करना पड़ता है। उस किरदार में उतरना पड़ता है।"[7] इसीलिए लेखिका की कृति पड़कर लगता है कि उपन्यास यथार्थ धरातल पर रचित है। उपन्यास में दो मुख्य पात्र कल्याणी और जानकी है। इनके अतिरिक्त जानकी की बहन लक्ष्मी व कुछ किन्नर पात्र हैं। आरम्भ में कल्याणी और किन्नर अंगूरी का मिलन होता है। अंगूरी के अनुरोध करने पर कल्याणी उसके साथ उनके डेरे पर जाती है और वहां पर भिन्न–भिन्न मानसिकता वाले किन्नरों से मिलती है। इनमें गुरु का बहुत मान होता है। उपन्यास में किन्नरों की सम्पति हड़पने के लिए नकली किन्नर बनने जैसी घटना भी उजागर हुई है। इस उपन्यास में लल्लन नामक नकली किन्नर के माध्यम से इस तथ्य को स्पष्ट किया गया है। इसके लिए वे पुलिस में शिकायत भी करते हैं किन्तु पुलिस का निराशाजनक उत्तर मिलता है:– "पुलिस–कलेक्टर में शिकायत भी की थी कि लल्लन हिजड़ों का नाम बदनाम कर रहा है। हिजड़ों के नाम पर वारदातें कर रहा है पर पुलिस ने यह कहकर टाल दिया कि जाँच कैसे करें, किसी की भी मर्जी के बगैर लिंग परीक्षण करना न कानूनी है न प्रजातांत्रिक।"[8] ऐसा सिर्फ इसलिए कहा गया क्योंकि पुलिस कुछ करना नहीं चाहती थी।

उपन्यास में रमीला अपने स्कूल जाने के विषय में बोलती है तो हमीदा शर्मिला के बारे में बताते हुए उसे कहती है:– "बड़े मजे से कह रही है स्कूल की उम्र हो गयी थी। कोई भरती करता क्या पाठशाला में ? पहले पूछते मेल की फीमेल। अपनी वो शर्मिला है न, छोरा बनके भरती हुई थी, तो बहनजी ने एक दिन चड्डी उतरवा ली थी उसकी और जूते मार के स्कूल से निकलवा दिया था उसको। उमराव गुरु के कुनबे ने शरण दी थी उसको नही तो भूखे मर जाती वो भी।"[9] अंगूरी भी समर्थन देते हुए व किन्नरों की व्यथा को स्पष्ट करते हुए कहती है कि उन्हें सब जगह से दुत्कारा जाता है। यही प्रश्न थर्ड जेंडर का प्रत्येक व्यक्ति कर रहा है कि उसको दुत्कारने की वजह ठीक नहीं है। उन्हें भी जीने का पूर्ण अधिकार है। उपन्यास का अंत लेखिका ने सुखान्त किया है। 'गुलाम मंड़ी' उपन्यास विश्व स्तर व देश के अन्दर मानव तस्करी, देह व्यापार, नारी शोषण की कड़वी सच्चाई से रुबरु करवाता है। इसके साथ ही किन्नर विमर्श के विविध सवालों को सामने लाते हुए उनके प्रति सकारात्मक बर्ताव करने की बात भी करता है।

चित्रा मुद्गल बहुमुखी प्रतिभा की धनी है। एक ओर वे सजग एवं क्रियाशील साहित्यकार हैं तो दूसरी ओर सक्रिय एवं सफल समाज सेविका। चित्रा जी ने समाज की मुख्यधारा से अलग किन्नर वर्ग की संवेदनाओं को आत्मसात करते हुए 'पोस्ट बॉक्स नं 203, नाला सोपारा' उपन्यास की रचना की। यह उपन्यास संवेदनात्मक उपन्यास है और किन्नर समुदाय के दैनिक यथार्थ, संवेदना, पीड़ा और दर्द से अवगत कराता है। प्रस्तुत उपन्यास एक किन्नर बेटे विनोद उर्फ बिन्नी उर्फ बिमली और उसकी माँ वंदना

के पत्र व्यवहार के माध्यम से किन्नरों के संघर्षपूर्ण जीवन की मार्मिक अभिव्यक्ति है। उपन्यास में बिन्नी के बिमली बनने की घटना मार्मिक है। अपने अविकसित लिंग के कारण परिवार व समाज द्वारा बहिष्कृत बिन्नी अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए संघर्ष करता है। वह सदियों से चली आ रही घृणित व क्रूर मानसिकता का विरोध कर समाज को यह समझाना चाहता है, कि शारीरिक कमी के कारण मनुष्य को मनुष्य न मानना बहुत गलत है। विनोद परिवार से विस्थापित होकर परिवार की याद में तड़पते हुए माँ से कहता है:– "तूने मेरी बा, तूने और पप्पा ने मिलकर मुझे कसाईयों के हाथ मासूम बकरी–सा सौंप दिया। मेरी सुरक्षा के लिए कोई कानूनी कार्यवाही क्यों नहीं की? क्यों वह अनर्थ हो जाने दिया तूने, जिसके लिए मैं दोषी नहीं था।"[10] विनोद अकेलेपन व अन्तर्द्वन्द्व के समय में अपनी माँ को पत्र लिखता है। वह अन्तर्द्वन्द्व में रहकर अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत रखता है।

बिन्नी संघर्षशील व्यक्ति है, वह किन्नरों के पारम्परिक पेशे भीख मांगने, नेग मांगने के पक्ष में नहीं है। और किन्नर गुरु के अत्याचारों के बावजूद अपनी पढ़ाई जारी रखता है। बिन्नी जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण रखता है वह जननांग विकलांगता को इतना बड़ा दोष नहीं मानता कि जीना ही छोड़ दिया जाए। बिन्नी कहता है:– "जननांग विकलांगता बहुत बड़ा दोष है, लेकिन इतना बड़ा भी नहीं है कि तुम मान लो कि तुम धड़ का मात्र वही निचला हिस्सा भर हो। मस्तिष्क नहीं हो, दिल नहीं हो, धड़कन नहीं हो, आँखें नहीं हो। तुम्हारे हाथ–पैर नहीं हैं। हैं.....हैं.....सब वैसे ही है जैसे औरों के हैं। सुनो पहचानो! पहचानो! अपने श्रम पर जियो, मनोरंजन की दक्षिणा पर नहीं। हिकारत की दक्षिणा जहर है–जहर। तुम्हें मारने का जहर, तुम्हें समाज से निकालने का जहर।"[11] उपन्यास के अंत में माँ अपनी मृत्यु से पहले अपने किन्नर बेटे को सार्वजनिक रुप से स्वीकार कर अपनी सम्पति तीनों बेटों में बराबर बांटने की घोषणा करती है। किन्नर समाज अपनी अस्मिता को प्रतिष्ठित करने के लिए जी जान लगा देता है, किन्तु फिर भी मात्र एक शारीरिक कमी के कारण समाज में तिरस्कृत होकर जीने के लिए अभिशप्त है। किन्नरों के प्रति समाज के नजरिये को बदलने में इस उपन्यास की उल्लेखनीय भूमिका है।

महेन्द्र भीष्म कृत 'मैं पायल' आत्मकथात्मक उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास लखनऊ की किन्नर गुरु पायल सिंह के जीवन संघर्ष की गाथा है। जिसमें प्रत्येक किन्नर के अतीत के संघर्ष की झलक परिलक्षित होती है। विस्थापन का दंश कष्टकारी होता है, प्रत्येक किन्नर को सर्वप्रथम यही दंश अपने परिवार से भुगतना होता है। किन्नर समाज के लोग अलिंगी देह को लेकर जन्म से मृत्यु तक अपमानित, तिरस्कृत और संघर्षमय जीवन व्यतीत करते हैं। आजीवन अपनी अस्मिता की तलाश में ठोकर खाते हैं। इस उपन्यास का मुख्य पात्र जुगनु उर्फ पायल किन्नर है। जुगनु का जन्म क्षत्रिय परिवार में हुआ था, जब उनके पिता को पता चलता है कि जुगनु एक किन्नर है, तब से वे उसका मुंह भी देखना पसंद नहीं करते। जुगनु बहुत छोटी थी तब उसको 'हिजड़ा' के बारे में पता नहीं था। एक दिन पायल के पिता दारु के नशे में उसे गाली देते हैं:– "ये जुगनी! तुम क्षत्रिय वंश में कलंक पैदा हुई है, साली हिजड़ा है।"[12] प्रस्तुत कथन से पता चलता है कि किन्नरों को उनके परिवार के लोग कलंक के रुप में देखते हैं। उपन्यास में पायल की माँ उसके शरीर को लेकर चिंता जाहिर करती है, परन्तु वह हमेशा अपनी बेटी के प्रति समर्पित रही, पायल को माँ के प्यार में कोई कमी महसूस नहीं हुई:– "ईश्वर को पता नहीं क्या मंजूर था, अच्छी–खासी लड़की जैसी लड़की लगती है।" इस कथन से स्पष्ट होता है कि माँ अपनी सन्तान के प्रति भेदभाव नहीं रखती है। माँ की संवेदना पायल के प्रति है, लेकिन पिता का क्रोध खतरनाक है। पायल जीवन में संघर्ष को जारी रखते हुए काम की तलाश में जुट जाती है और आकाशवाणी में नौकरी करती है। जिसे पिता कलंक कहता है, वही पायल अच्छी नौकरी करती है, अपने परिवार के प्रति समर्पण का भाव रखते हुए माँ से चोरी मिलती है और उनकी पैसों से सहायता भी करती है। फिर पायल धीरे–धीरे किन्नर का पेशा

अपनाती है और सफल किन्नर गुरु बनती है। इस उपन्यास में किन्नरों की समस्याओं के साथ–साथ एक माँ की वेदना, तृतीयलिंगी औलाद के प्रति पिता का आक्रोश भी देखने को मिलता है। किन्नर को सर्वप्रथम घर से तिरस्कृत, उपेक्षित किया जाता है। लेकिन पायल जैसी संघर्षशील पात्र से बहुत कुछ सीखने को मिलता है। भीष्म जी ने किन्नरों की सामाजिक समस्याओं को पाठकों के सामने प्रस्तुत किया है, जैसे– पारिवारिक उपेक्षा और रिश्तेदारों की प्रताड़ना, समाज का भय, मानसिकता का परिवर्तन, पितृसतात्मक समाज, आर्थिक संकट और शैक्षणिक संघर्ष।

भगवंत अनमोल कृत 'जिन्दगी 50–50' उपन्यास के नायक अनमोल के भाई हर्षा को किन्नर होने का दंश झेलना पड़ता है। नायक अनमोल का छोटा भाई और उनकी एकमात्र संतान, दोनों ही किन्नर हैं। अपने बच्चों का किन्नर होना उनके परिवार वालों के लिए एक श्राप के समान था। लोगों की मानसिकता ऐसी है कि सब किन्नरों से आशीर्वाद की कामना करते हैं परन्तु अपने घर में किन्नर का होना बर्दाशत नहीं है। अनमोल कहता है:– "मेरा छोटा भाई एक किन्नर है, पर उसका किन्नर होना मानो हमारे परिवार के लिए एक अभिशाप था। उसके जन्म के बाद शायद ही कोई दिन ऐसा हो जो हमने चैन से गुजारा हो। इसका जिम्मेदार न वह था, न ही मेरे माता–पिता। पर उसके किन्नर होने को अभिशाप में बदल दिया था हमारे तथाकथित समाज ने।"[13] अनमोल का पिता उसके छोटे भाई से प्यार नहीं करता, क्योंकि वह हर्षा का किन्नर होना उसी का ही दोष समझता है। उन्हें अपने बेटे हर्षा के सुख से ज्यादा समाज का भय रहता था। समाज स्वयं तो किन्नर से घृणा करता है, परन्तु उसके परिवार वालों को भी उससे नफरत करने के लिए विवश कर देता है। अनमोल के पिता समाज में अपनी इज्जत खोने के डर से उस मासूम बच्चे को मारने के लिए तैयार हो जाता है। परन्तु माँ और भाई अनमोल उसे बचा लेते हैं, फिर भी पिता का प्यार उसको नसीब नहीं होता। हर्षा को बचपन से लेकर बड़े होने तक कई जगहों पर अपने किन्नर होने के कारण कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अंत में अपनी जिन्दगी से त्रस्त होकर वह हार मान लेता है, और फांसी लगाकर इस जिन्दगी को अलविदा कह देता है। परन्तु मरने से पहले वह अपने भाई अनमोल को चिट्ठी लिखकर कहता है:– "जिन्दगी में हर किसी में कमी होती है। सबकी जिन्दगी 50–50 होती है, जैसे दिन और रात.....अंधेरा और प्रकाश....आपने हमेशा मेरे शारीरिक पक्ष को ही देखा.....मेरी कमजोरी ही आपको दिखी.....समाज की परवाह करते–करते आप यह भी भूल गए कि मैं भी एक इंसान हूँ.....आपके स्नेह प्यार की भूखी हूँ.....मेरी जिन्दगी के इस हिस्से को आपने अनदेखा ही कर दिया.....नतीजा यह हुआ कि मैं इस दलदल में आज फंस गई हूँ। इसलिए मैं छोड़ कर जा रही हूँ आपको आपके समाज के साथ।"[14] अनमोल ने अपने भाई को पल–पल पिसते और अपमानित होते देखकर दृढ़ निश्चय किया कि वह अपने बेटे सूर्या को ऐसी कष्टपूर्ण जिन्दगी नहीं देगा, बल्कि अच्छी जिन्दगी के लिए उसकी मदद करेगा। उसे हर क्षेत्र में आगे ले जाएगा। उसने अपने बेटे को पढ़ा लिखाकर काबिल बनाया। उसे अपने पैरों पर खड़े होने का वजूद दिया। अंततः अपने पिता के सहयोग से सूर्या 'प्राइवेट डिटेक्टिव एजेंसी' खोलने का लाइसेंस प्राप्त कर लेता है। उपन्यासकार ने यहां रुढ़िवादी, सामाजिक मान्यताओं को चुनौती देते हुए समाज में एक नई ऊर्जा का संचार किया है। यदि प्रत्येक किन्नर के माता–पिता अनमोल की तरह सोचते हैं तो उन्हें कभी भी अपने घर–परिवार से विस्थापित होकर हाशिये पर जिन्दगी गुजारनी नहीं पड़ेगी।

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि हमारे समाज में किन्नर समुदाय हाशिए पर जीवन व्यतीत कर रहा है। सामाजिक स्वीकृति प्राप्त न होने के कारण यह समुदाय संघर्षरत है। सम्पूर्ण उपन्यास किन्नरों पर होने वाले अत्याचारों का दस्तावेज हैं। किन्नरों के उद्धार के लिए कोई कल्याणकारी योजना नहीं बनी है। उपरोक्त उपन्यासों में किन्नर समुदाय की व्यथा–यातना–संघर्ष और जिजीविषा की अनवरत यात्रा है, लेकिन उसके साथ–साथ सम्पूर्ण समाज, व्यवस्था और व्यक्ति के अंदर छिपी कलुषित प्रवृतियां, स्त्री की

नियति, बाल मन की यौनिक जिज्ञासाएं, प्रेम के गहरे अर्थ, देह की जरूरत, नैतिक मूल्यों की निरर्थकता, अमानवीय सामाजिक विषमता, माँ की ममतामयी छवि की अपरिहार्यता और उसे महत्व देने की जरूरत जैसे अनेक सवाल उठाए गए हैं। उपन्यासों में समाज के तीसरे समुदाय की उपेक्षा और तिरस्कार का चित्रण है। उनके प्रति मानवीय संवेदना अपेक्षित है एवं उनके उत्थान के लिए, उन्हें मनुष्य का दर्जा दिलवाने में समाज एवं शासन की भूमिका की आवश्यकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. वाड़मय (त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका), खंड़– तीन, थर्ड जेंडर कथा आलोचना, पृ. 71
2. नीरजा माधव, यमदीप, पृ. 12
3. डॉ. अनुसूईया त्यागी, मैं भी औरत हूँ, परमेश्वरी प्रकाशन–नई दिल्ली, पृ. 26
4. किन्नर कथा, महेन्द्र भीष्म, पृ. 24
5. वही, पृ. 88
6. तीसरी ताली, प्रदीप सौरभ, वाणी प्रकाशन, पृ. 139
7. निर्मला भुराड़िया, गुलाम मंड़ी, सामयिक प्रकाशन–नई दिल्ली, पृ. 5
8. वही, पृ. 67
9. वही, पृ. 67
10. चित्रा मुद्गल, पोस्ट बॉक्स नं. 203, नाला सोपारा, सामयिक प्रकाशन–नई दिल्ली, पृ. 11
11. वही, पृ. 50
12. महेन्द्र भीष्म, मैं पायल, अमन प्रकाशन–रामबाग कानपुर, पृ. 26
13. भगवंत अनमोल, जिन्दगी 50–50, पृ. 143
14. वही, पृ. 206